न्यायमूर्ति *विकास बहल के समक्ष*

चंदर प्रकाश गुप्ता - *याचिकाकर्ता*

बनाम

विजय कुमार सिंगला - *प्रतिवादी*

2021 का सी.आर.एम-एम नंबर 39069

20 सितंबर, 2021

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 - धारा 482 - निगोशिएबल इंस्ट्रूमेंट्स एक्ट, 1881 - धारा 138 - निगोशिएबल इंस्ट्रूमेंट्स एक्ट की धारा 138 के तहत न्यायिक मजिस्ट्रेट द्वारा दोषी ठहराए गए याचिकाकर्ता को 2 साल के कारावास की सजा और 1,50,00,000 रुपये का मुआवजा देने का आदेश दिया गया - अपील दायर की गई - शिकायतकर्ता ने याचिकाकर्ता को मुआवजे की राशि का 20% जमा करने का निर्देश देने की मांग करते हुए आवेदन दायर किया - अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने याचिकाकर्ता को मुआवजे की राशि का 20% जमा करने का निर्देश दिया। याचिकाकर्ता ने सीआरपीसी की धारा 482 के तहत याचिका दायर करके आदेश को चुनौती दी - खारिज - तर्क कि आक्षेपित आदेश पहले के आदेशों की गलत व्याख्या के बराबर है - नेगोशिएबल इंस्ट्रूमेंट्स एक्ट की धारा 148 उस चरण को परिभाषित नहीं करती है जब शक्ति का प्रयोग किया जा सकता है - इसके अलावा धारा 148 गैर-बाध्यकारी खंड से शुरू होती है - बाद के चरण में जमा राशि मांगना सजा के निलंबन के आदेश की 'समीक्षा' के अर्थ के भीतर नहीं आएगा - आगे कहा गया - याचिकाकर्ता और उसके दोनों सह-दोषी ने चेक पर हस्ताक्षर किए - दोनों 'दराज' के अर्थ के भीतर आएंगे - दोनों ने अपनी-अपनी अपील दायर की है - दोनों अपीलों में न्यूनतम जमा करने की आवश्यकता वाला आदेश अपीलीय अदालत की शक्ति के भीतर होगा - आगे कहा गया - प्रावधान अपीलीय अदालत की शक्ति को आरोपी व्यक्ति से उक्त न्यूनतम राशि मांगने से प्रतिबंधित नहीं करते हैं यदि किसी अन्य आरोपी को राशि जमा करने के लिए कहा गया है।

*अभि*निर्धारित किया गया कि, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील का पहला तर्क कि क्रमशः 17.03.2021 और 22.07.2021 के आक्षेपित आदेश, वास्तव में, दिनांक 07.11.2017 के आदेश की समीक्षा के समान होंगे, दो आधारों पर गलत है, क्योंकि 1881 के अधिनियम की धारा 148 के प्रावधान के अवलोकन से पता चलता है कि ऐसा कोई चरण परिभाषित नहीं है कि उक्त शक्ति का उपयोग कब किया जा सकता है। अपीलीय न्यायालय। इसके अलावा, सुरिंदर सिंह देसवाल (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विशेष रूप से फैसले के पैरा 9 में कहा है कि ऐसा या तो मूल शिकायतकर्ता द्वारा दायर आवेदन पर या सीआरपीसी की धारा 389 के तहत अपीलकर्ता/दोषी द्वारा सजा के निलंबन के लिए दायर आवेदन पर भी किया जा सकता है। इस प्रावधान का उद्देश्य बहुत स्पष्ट है। एक बार 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत किसी मामले में, आरोपी व्यक्तियों को दोषी ठहराया

गया है, फिर, 1881 के अधिनियम के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए, यह अनिवार्य किया गया है कि अपीलीय न्यायालय को अपील दायर करने वाले आरोपी व्यक्तियों को जुर्माने / मुआवजे का न्यूनतम 20% भुगतान करने का निर्देश देना चाहिए और वास्तव में, यह देखा गया है कि 'हो सकता है' शब्द को 'इच्छा' के रूप में पढ़ा जाना चाहिए और इस प्रकार, नियम के मामले के रूप में, अपीलीय न्यायालय को अपीलकर्ता को मुआवजे / जुर्माने की न्यूनतम 20% राशि जमा करने का निर्देश देना आवश्यक है। आक्षेपित आदेशों के आधार पर, अपीलीय न्यायालय ने कानून के उक्त प्रावधान को लागू करने की मांग की है और सुरिंदर सिंह देसवाल (सुप्रा) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून का भी पालन किया है। इसके अलावा, धारा 148 एक गैर-बाध्यकारी खंड से शुरू होती है, जो यह निर्धारित करती है कि 'दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में निहित किसी भी चीज के बावजूद', इस आशय का कोई भी तर्क कि यह समीक्षा के बराबर होगा और सीआरपीसी के तहत अनुमेय नहीं होगा, गैर-बाध्यकारी खंड के मद्देनजर कोई प्रभाव नहीं होगा। इसके अलावा, सजा के निलंबन के आदेश की 'समीक्षा' के अर्थ के अंतर्गत बाद के चरण में जमा राशि की मांग नहीं की जाएगी।

(पैरा 18)

इसके अलावा, याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए चौथे तर्क के संबंध में कि दोनों अभियुक्तों को मुआवजे की राशि का 20% जमा करने के लिए अलग-अलग नहीं कहा जा सकता था और उक्त उद्देश्य के लिए, 1881 के अधिनियम की धारा 148 पर भरोसा करने की मांग की जाती है। जहां 'दराज' शब्द का उल्लेख किया गया है और इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा पारित अंतरिम आदेश पर भी। शिकायतकर्ता के मामले के अनुसार और आक्षेपित निर्णय के अनुसार, वर्तमान याचिकाकर्ता और सीमा गुप्ता (अन्य मामले में याचिकाकर्ता) ने चेक पर हस्ताक्षर किए हैं और इस प्रकार, दोनों दराज के अर्थ के भीतर आएंगे और इसलिए, 1881 के अधिनियम की धारा 148 का प्रावधान स्वतंत्र रूप से उनमें से प्रत्येक पर लागू होगा। 1881 के अधिनियम की धारा 148 के तहत उक्त प्रावधान याचिकाकर्ता के साथ-साथ सह-अभियुक्त सीमा गुप्ता पर भी लागू होगा क्योंकि अपीलीय न्यायालय को उक्त शक्ति दराजक/ अभियुक्त / अपीलकर्ता को जुर्माना / मुआवजे का न्यूनतम 20% जमा करने का निर्देश देने के लिए दी गई है, जिन्होंने अपील दायर करने का विकल्प चुना है और वर्तमान मामले में दोनों अभियुक्तों को दोषी ठहराया गया है और उन्होंने अपने संबंधित को प्राथमिकता दी है। अपील करते हैं और इस प्रकार, गुण-दोष के आधार पर अपने मामलों को उत्तेजित करना चाहते हैं। इस प्रकार, दोनों अपीलों में उन्हें न्यूनतम 20% जमा करने की आवश्यकता वाले आदेश, अपीलीय न्यायालय की शक्ति के भीतर होंगे।

(पैरा 21)

इसके अलावा, प्रावधान अपीलीय न्यायालय की शक्ति को आरोपी व्यक्ति से जमा की उक्त न्यूनतम राशि मांगने से प्रतिबंधित नहीं करते हैं, यदि किसी अन्य आरोपी व्यक्ति को उक्त राशि जमा करने के लिए कहा गया है। यदि उक्त पहलू पर याचिकाकर्ता के विद्वान वकील के

तर्क को स्वीकार किया जाता है, तो इससे अराजक स्थिति पैदा हो जाएगी, क्योंकि इस बात को लेकर पूरी तरह से भ्रम होगा कि किस अपीलकर्ता को राशि जमा करने का निर्देश दिया जाना है और किस अपीलकर्ता को भुगतान करने से छूट दी जानी है। इससे ऐसी स्थिति पैदा हो सकती है जहां एक आरोपी दूसरे आरोपी के अपील दायर करने का इंतजार करेगा ताकि पहली अपील दायर करने वाले आरोपी/अपीलकर्ता को राशि जमा करने के लिए कहा जाए और बाद में अपील दायर करने वाला आरोपी छूट की मांग कर सके। ऐसी स्थिति में, आरोपी व्यक्ति जो अपील दायर करने के अपने अधिकार का पीछा कर रहा है, वह अन्य आरोपी को जमा करने से बचाते हुए जमा राशि का बोझ डाल सकता है। उक्त स्थिति की परिकल्पना 1881 के अधिनियम के तहत कभी नहीं की गई थी। इसके अलावा, एक बार, अधिनियम में दूसरे अपीलकर्ता से जमा राशि मांगने पर कोई प्रतिबंध नहीं है और अपीलीय न्यायालय ने आरोपी / अपीलकर्ता दोनों पर उक्त शर्त लगाने का विकल्प चुना है, तो यह न्यायालय यह नहीं पाता है कि आक्षेपित आदेश किसी भी अनियमितता या अवैधता से ग्रस्त हैं। वास्तव में, यदि दोनों अभियुक्त व्यक्तियों/अपीलकर्ताओं द्वारा जमा की जाने वाली कुल राशि को भी ध्यान में रखा जाए तो यह राशि 60,00,000/- रुपए होगी जो अभी भी ट्रायल कोर्ट द्वारा दी गई मुआवजे की कुल राशि अर्थात 1,50,00,000/- रुपए से कम है। वास्तव में, 1881 के अधिनियम की धारा 148 के अवलोकन से पता चलता है कि अपीलीय न्यायालय के पास एकल अभियुक्त व्यक्ति/अपीलकर्ता को ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए जुर्माने/मुआवजे के 20% से अधिक का भुगतान करने का निर्देश देने की शक्ति है और इस प्रकार, 60,00,000/- रुपये की उक्त राशि अकेले एक अभियुक्त / अपीलकर्ता से भी जमा करने की मांग की जा सकती थी। समन्वय पीठ द्वारा पारित अंतरिम आदेश पर भरोसा करना बाध्यकारी मिसाल नहीं माना जा सकता है क्योंकि यह न्यायालय उपरोक्त पहलू पर अंतिम विचार कर रहा है और जिन तथ्यों और परिस्थितियों में उक्त अंतरिम आदेश पारित किया गया था और साथ ही उक्त मामले में आक्षेपित आदेश भी इस न्यायालय के समक्ष नहीं है। (पैरा 22)

याचिकाकर्ता की ओर से सीएस पसरीचा, अधिवक्ता।

विकास बहल, जे (मौखिक)

(एक) धारा 482 के तहत दायर वर्तमान याचिका में प्रार्थना

सीआरपीसी दिनांक 17.03.2021 (अनुबंध पी-6) के आदेश के साथ-साथ अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, हिसार द्वारा सीआरए-557-2017 में पारित आदेश (अनुलग्नक पी-7) को रद्द करने के लिए है, जिसका शीर्षक ***चंद्र प्रकाश*** *बनाम* ***विजय*** है, जिसके तहत वर्तमान याचिकाकर्ता जिसे नेगोशिएबल इंस्ट्रूमेंट्स एक्ट, 1881 की धारा 138 के तहत दोषी ठहराया गया है।

(इसके बाद "1881 के अधिनियम" के रूप में संदर्भित) को 1881 अधिनियम की धारा 148 के संशोधित प्रावधानों के मद्देनजर और 2019 की आपराधिक अपील संख्या 917-944 में

माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून के मद्देनजर 60 दिनों के भीतर मुआवजे की राशि का 20% जमा करने का निर्देश दिया गया है। 29.05.2019 को "सुरिंदर सिंह देसवाल और अन्य बनाम वीरेंद्र गांधी" शीर्षक से फैसला सुनाया गया।

(दो) वर्तमान मामले के संक्षिप्त तथ्य यह हैं कि प्रतिवादी ने वर्तमान याचिकाकर्ता चंद्र प्रकाश गुप्ता और सीमा गुप्ता के खिलाफ नेगोशिएबल इंस्ट्रूमेंट्स एक्ट, 1881 की धारा 138 के तहत शिकायत दर्ज की थी, जिन्होंने स्वतंत्र रूप से सीआरपीसी की धारा 482 के तहत एक याचिका दायर की है।

(तीन) दिनांक 10.10.2017 के फैसले के तहत, वर्तमान याचिकाकर्ता और सीमा गुप्ता को 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध करने के लिए दोषी ठहराया गया था और 11.10.2017 को दोनों दोषियों को दो-दो साल की अवधि के लिए कारावास की सजा सुनाई गई थी और चेक की दोगुनी राशि का भुगतान करने की सजा सुनाई गई थी। इस प्रकार 1,50,00,000/- रुपये का मुआवजा दिया गया।

(चार) दोषसिद्धि के उक्त फैसले के खिलाफ दो अलग-अलग अपील ें दायर की गई थीं, एक वर्तमान याचिकाकर्ता द्वारा और दूसरी सीमा गुप्ता द्वारा। 07.11.2017 को, वर्तमान याचिकाकर्ता की सजा निलंबित कर दी गई थी। इसके बाद, 28.09.2018 को, शिकायतकर्ता द्वारा वर्तमान याचिकाकर्ता को 1881 के अधिनियम में संशोधन के मद्देनजर मुआवजे की 20% राशि जमा करने का निर्देश देने के लिए एक आवेदन दायर किया गया था। उक्त आवेदन में, यह कहा गया था कि वर्तमान याचिकाकर्ता ने अदालत के समक्ष कोई पैसा जमा नहीं किया है। उक्त आवेदन पर याचिकाकर्ता द्वारा एक जवाब दायर किया गया था और दिनांक 17.03.2021 के आदेश के माध्यम से, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश, हिसार ने 1881 के अधिनियम की धारा 148 के संबंध में 2018 के संशोधित अधिनियम संख्या 20 को ध्यान में रखते हुए और 2019 की आपराधिक अपील संख्या 917-944 में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून को ध्यान में रखते हुए 29.05.2019 ***को सुरेंद्र सिंह देसवाल और अन्य*** *बनाम वीरेंद्र गांधी* के रूप में निर्णय लिया।और मैसर्स ***गिन्नी गारमेंट्स*** *बनाम* ***मेसर्स सेठी गारमेंट्स, सीआरआर-9872-2018 में इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा निर्धारित कानून ने 04.04.2019 को फैसला सुनाया,*** याचिकाकर्ता को 60 दिनों की अवधि के भीतर मुआवजे की राशि का 20% जमा करने का निर्देश दिया गया। उक्त राशि 20.05.2021 तक जमा की जानी थी, लेकिन हालांकि, जैसा कि 22.07.2021 के आदेश (अनुबंध पी-7) से स्पष्ट है, वर्तमान याचिकाकर्ता ने मुआवजे की राशि के 20% के आंशिक भुगतान के रूप में केवल 1,00,000 रुपये की राशि का भुगतान किया था और सुनवाई की अगली तारीख पर शेष राशि का भुगतान करने का वचन दिया था।

(पाँच) उक्त आदेशों से व्यथित, याचिकाकर्ता द्वारा वर्तमान याचिका दायर की गई है।

(छः) याचिकाकर्ता के वकील ने प्रस्तुत किया है कि चूंकि वर्तमान मामले में, दिनांक 07.11.2017 के आदेश के तहत, याचिकाकर्ता की सजा को पहले ही अपील के फैसले तक निलंबित कर दिया गया था और याचिकाकर्ता को अदालत की संतुष्टि के लिए समान राशि के एक मुचलके के साथ 50,000 रुपये की राशि में जमानत पर जमानत पर स्वीकार किया गया था और अपेक्षित जमानत बांड प्रस्तुत किए गए थे। स्वीकार और सत्यापित, इस प्रकार, मुआवजे की 20% राशि जमा करने के लिए 28.09.2018 को दायर किया गया आवेदन सुनवाई योग्य नहीं था और वास्तव में, यह 07.11.2017 को पारित पिछले आदेश की समीक्षा के बराबर होगा।

(सात) याचिकाकर्ता के वकील की दूसरी दलील यह है कि वर्तमान मामले में, 11.10.2017 को याचिकाकर्ता को सजा सुनाते समय, यह देखा गया था कि शिकायतकर्ता को मुआवजे की राशि देय होगी, यदि वह आदेश अपील/ संशोधन के निर्णय के बाद अंतिम रूप प्राप्त करता है। दिनांक 11.10.2017 के आदेश के पैरा 4 का संदर्भ दिया गया है। उसी के प्रासंगिक भाग को नीचे पुन: प्रस्तुत किया गया है: -

"न्याय के हित में, दोषियों को शिकायतकर्ता को एक करोड़, पचास लाख (1,50,00,000 रुपये) का मुआवजा देने का निर्देश दिया जाता है, क्योंकि शिकायतकर्ता को चेक की राशि पर ब्याज खोने के माध्यम से आरोपी की कार्रवाई के कारण न केवल नुकसान हुआ है, बल्कि वर्तमान शिकायत को आगे बढ़ाने में भी खर्च हुआ है। हालांकि, अपील/संशोधन, यदि कोई हो, के निर्णय के बाद इस आदेश को अंतिम रूप देने के मामले में शिकायतकर्ता को मुआवजे की राशि देय होगी।

(आठ) यह प्रस्तुत किया गया है कि वास्तव में, आक्षेपित आदेश दिनांकित 17.03.2021 (अनुबंध पी-6) न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी द्वारा पारित दिनांक 11.10.2017 के आदेश के विपरीत है।

(नौ) याचिकाकर्ता के वकील की तीसरी दलील यह है कि 28.09.2018 के आवेदन के जवाब में, याचिकाकर्ता ने विशेष रूप से कहा था कि 28.09.2018 का आवेदन सुनवाई योग्य नहीं था और मुआवजे की राशि का भुगतान शिकायतकर्ता को केवल तभी किया जाना था जब आदेश को अंतिम रूप दिया जाता है। हालांकि, दिनांक 17.03.2021 (अनुबंध पी-6) के आक्षेपित आदेश में, उक्त आपत्तियों पर विचार नहीं किया गया है और इस प्रकार, आक्षेपित आदेश गैर-मौखिक है।

(दस) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील की चौथी दलील यह है कि वास्तव में, वर्तमान मामले में, वर्तमान याचिकाकर्ता के साथ-साथ सीमा गुप्ता (दूसरे मामले में याचिकाकर्ता) को मुआवजे की राशि का 20% जमा करने के लिए कहा गया है और ऐसा नहीं किया जा सकता है, क्योंकि केवल एक आरोपी को मुआवजे की राशि का 20% जमा करने के लिए कहा जा सकता था। उक्त उद्देश्य के लिए, याचिकाकर्ता के वकील ने एक अंतरिम आदेश पर भरोसा किया है

03.10.2019 को इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा सीआरएम-एम 42575-2019 में ***राजदीप रंधावा और एक अन्य*** *बनाम* ***तेजिंदर सिंह*** के रूप में पारित किया गया था, जिसमें आक्षेपित आदेश के संचालन पर रोक लगा दी गई थी, जिसके तहत याचिकाकर्ताओं को प्रत्येक को 25% राशि जमा करने का निर्देश दिया गया था, इस शर्त के अधीन कि याचिकाकर्ता मुआवजे की राशि का कुल 25% जमा करेंगे।

(ग्यारह) इस अदालत ने याचिकाकर्ता के विद्वान वकील को सुना है।

(बारह) 1881 के अधिनियम की धारा 148, जो वर्तमान मामले के अधिनिर्णय के लिए प्रासंगिक है, नीचे प्रस्तुत की गई है: -

"148. दोषसिद्धि के खिलाफ अपील लंबित होने तक भुगतान का आदेश देने की अपीलीय न्यायालय की शक्ति-

(एक) संहिता में निहित किसी भी बात के बावजूद

दंड प्रक्रिया, 1973 (1974 का 2), धारा 138 के तहत दोषसिद्धि के खिलाफ दराज द्वारा अपील में, अपीलीय न्यायालय अपीलकर्ता को ऐसी राशि जमा करने का आदेश दे सकता है जो ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए जुर्माने या मुआवजे का न्यूनतम बीस प्रतिशत होगा:

बशर्ते कि इस उपधारा के तहत देय राशि धारा 143 ए के तहत अपीलकर्ता द्वारा भुगतान किए गए किसी भी अंतरिम मुआवजे के अतिरिक्त होगी।

(दो) उपधारा (1) में निर्दिष्ट राशि आदेश की तारीख से साठ दिनों के भीतर, या ऐसी आगे की अवधि के भीतर जमा की जाएगी जो अपीलकर्ता द्वारा दिखाए जा रहे पर्याप्त कारण पर न्यायालय द्वारा निर्देशित तीस दिनों से अधिक न हो।

(तीन) अपीलीय न्यायालय अपील के लंबित रहने के दौरान किसी भी समय अपीलकर्ता द्वारा शिकायतकर्ता को जमा की गई राशि जारी करने का निर्देश दे सकता है:

परन्तु यदि अपीलकर्ता को बरी कर दिया जाता है, तो न्यायालय शिकायतकर्ता को निर्देश देगा कि वह अपीलकर्ता को इस प्रकार जारी की गई राशि भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा प्रकाशित बैंक दर पर ब्याज के साथ, जो संबंधित वित्तीय वर्ष की शुरुआत में प्रचलित है, आदेश की तारीख से साठ दिनों के भीतर, या ऐसी आगे की अवधि के भीतर जो न्यायालय द्वारा निर्देशित तीस दिनों से अधिक न हो, चुकाने का निर्देश देगा। शिकायतकर्ता द्वारा।

(तेरह) उक्त प्रावधान के अवलोकन से पता चलता है कि दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में निहित किसी भी बात के बावजूद, जब धारा 138 के तहत दोषसिद्धि के खिलाफ अपील दायर की जाती है, तो अपीलीय न्यायालय के पास अपीलकर्ता को जुर्माना/मुआवजे के न्यूनतम बीस प्रतिशत के अधीन ट्रायल कोर्ट द्वारा दी गई क्षतिपूत/जुर्माने की ऐसी राशि जमा करने का निर्देश देने की शक्ति होती है।

(चौदह) यह भी प्रावधान किया गया है कि धारा 148 की उप-धारा (1) के तहत देय राशि 1881 अधिनियम की धारा 143 ए के तहत अपीलकर्ता द्वारा भुगतान किए गए किसी भी अंतरिम मुआवजे के अतिरिक्त होगी। यहां तक कि इस तरह की जमा करने के लिए समय अवधि भी तय की गई है और इसे आदेश की तारीख से साठ दिनों के भीतर जमा किया जाना है और आगे प्रतिबंध लगाए गए हैं कि उक्त अवधि को तीस दिनों की अवधि से आगे नहीं बढ़ाया जा सकता है और उक्त विस्तार केवल अपीलकर्ता द्वारा दिखाए गए पर्याप्त कारण पर दिया जा सकता है। वास्तव में, उप-धारा (3) के तहत, अपीलीय न्यायालय को अपील के लंबित रहने के दौरान किसी भी समय अपीलकर्ता द्वारा शिकायतकर्ता को जमा की गई राशि जारी करने का निर्देश देने की शक्ति दी गई है। उक्त धारा के अवलोकन से पता चलता है कि यह अपीलीय न्यायालय की शक्ति को केवल अपीलकर्ता की सजा को निलंबित करने के समय उक्त जमा राशि की मांग करने की शक्ति को प्रतिबंधित नहीं करता है। अपील के लंबित रहने के दौरान किसी भी स्तर पर ऐसा किया जा सकता है। इसके अलावा, उक्त प्रावधान में एक गैर-बाध्यकारी खंड है, जिसमें सीआरपीसी में निहित कुछ भी उक्त प्रावधान को लागू करने या लागू करने के रास्ते में नहीं आता है। सुरिंदर सिंह देसवाल *(सुप्रा) के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय* ने निम्नानुसार निर्णय दिया है:-

"8.1 यह देखने और यह समझते हुए यह देखने के बाद कि अपीलों को आसानी से दायर करने और कार्यवाही पर स्थगन प्राप्त करने के कारण अनादरित चेकों के बेईमान दलालों की देरी की रणनीति के कारण, एनआई अधिनियम की धारा 138 के अधिनियमन का उद्देश्य और उद्देश्य निराश हो रहा था।

संसद ने एनआई अधिनियम की धारा 148 में संशोधन करना उचित समझा है, **जिसके द्वारा प्रथम अपीलीय न्यायालय को एनआई अधिनियम की धारा 138 के तहत दोषसिद्धि के आदेश को चुनौती देने वाली अपील में, दोषी अभियुक्त - अपीलकर्ता को ऐसी राशि जमा करने का निर्देश देने की शक्ति प्रदान की जाती है जो ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए जुर्माने या मुआवजे का न्यूनतम 20% होगी। एनआई अधिनियम की धारा 148 में संशोधन द्वारा, यह नहीं कहा जा सकता है कि अभियुक्त - अपीलकर्ता के अपील के किसी भी निहित अधिकार को छीन लिया गया है और / या प्रभावित किया गया है। इसलिए, अपीलकर्ताओं की ओर से यह निवेदन किया गया है कि एनआई अधिनियम की धारा 148 में संशोधन को पूर्वव्यापी रूप से लागू नहीं किया जाएगा और विशेष रूप से 1.9.2018 से पहले दायर किए गए मामलों / शिकायतों के संबंध में लागू नहीं होगा, जिसमें कोई आधार नहीं है और इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है, क्योंकि एनआई अधिनियम की धारा 148 में संशोधन द्वारा, अपील का कोई मूल अधिकार नहीं छीना गया है और / या प्रभावित नहीं किया गया है।** इसलिए गरिकापट्टी वीराया (सुप्रा) और वीडियोकॉन इंटरनेशनल लिमिटेड (सुप्रा) के मामलों में इस न्यायालय के निर्णय, जिन पर अपीलकर्ताओं की ओर से पेश होने वाले विद्वान वरिष्ठ वकील द्वारा भरोसा किया गया है, मामले के तथ्यों पर लागू नहीं होंगे। इसलिए, ऊपर उल्लिखित एनआई अधिनियम की धारा

148 में संशोधन के उद्देश्यों और कारणों के कथन पर विचार करते हुए, संशोधित एनआई अधिनियम की धारा 148 की उद्देश्यपूर्ण व्याख्या पर, हमारी राय है कि एनआई अधिनियम की धारा 148, जैसा कि संशोधित किया गया है, एनआई अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध के लिए दोषसिद्धि और सजा के आदेश के खिलाफ अपील के संबंध में लागू होगा। यहां तक कि ऐसे मामले में भी जहां एनआई अधिनियम की धारा 138 के तहत अपराध के लिए आपराधिक शिकायतें संशोधन अधिनियम संख्या 20/2018 से पहले दर्ज की गई थीं, यानी 01.09.2018 से पहले। यदि इस तरह की उद्देश्यपूर्ण व्याख्या को नहीं अपनाया जाता है, तो उस स्थिति में, एनआई अधिनियम की धारा 148 में संशोधन का उद्देश्य और उद्देश्य निराश हो जाएगा। इसलिए, इस प्रकार, प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा अपीलकर्ताओं को एनआई अधिनियम की धारा 148 को संशोधित मानते हुए ट्रायल कोर्ट द्वारा लगाए गए जुर्माना/मुआवजे की राशि का 25% जमा करने का निर्देश देने वाली कोई त्रुटि नहीं की गई है।

9. अब ऐसा जहां तक अपीलकर्ताओं की ओर से यह दलील दी गई है कि एनआई अधिनियम की धारा 148 में प्रयुक्त भाषा को संशोधित मानते हुए भी अपीलीय न्यायालय "अपीलकर्ता" को ऐसी राशि जमा करने का आदेश दे सकता है जो ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए जुर्माने या मुआवजे का न्यूनतम 20% होगा और इस्तेमाल किया गया शब्द "होगा" नहीं है और इसलिए अपीलकर्ता - आरोपी को ऐसी राशि जमा करने का निर्देश देने के लिए प्रथम अपीलीय अदालत के पास विवेकनिहित है और अपीलीय अदालत ने इसे अनिवार्य माना है, जो अपीलकर्ताओं के लिए विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता के अनुसार संशोधित एनआई अधिनियम की धारा 148 के प्रावधानों के विपरीत होगा, जिसमें एनआई अधिनियम की संशोधित धारा 148 को समग्र रूप से पढ़ा जाना चाहिए।

संशोधन अनुभाग के उद्देश्यों और कारणों का विवरण

हालांकि यह सच है कि एनआई अधिनियम की संशोधित धारा 148 में, प्रयुक्त शब्द "हो सकता है" है, इसे आम तौर पर "नियम" या "होगा" के रूप में माना जाता है और अपीलीय अदालत द्वारा जमा करने का निर्देश नहीं देना एक अपवाद है जिसके लिए विशेष कारण दिए जाने हैं। इसलिए एनआई अधिनियम की संशोधित धारा 148 अपीलीय न्यायालय को अपीलकर्ता अभियुक्त को राशि जमा करने का निर्देश देने के लिए एक आदेश पारित करने की शक्ति प्रदान करती है जो मूल शिकायतकर्ता द्वारा दायर आवेदन पर या सीआरपीसी की धारा 389 के तहत अपीलकर्ता अभियुक्त द्वारा दायर आवेदन पर जुर्माना या मुआवजे का 20% से कम नहीं होगा। उपरोक्त को इस तथ्य पर विचार करने की आवश्यकता है कि एनआई अधिनियम की संशोधित धारा 148 के अनुसार, ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए जुर्माने या मुआवजे का न्यूनतम 20% जमा करने का निर्देश दिया जाता है और ऐसी राशि आदेश की तारीख से 60 दिनों की अवधि के भीतर जमा की जानी है। या अपीलकर्ता द्वारा दिखाए गए पर्याप्त कारण के लिए अपीलीय अदालत द्वारा निर्देशित 30 दिनों से अधिक की अवधि के भीतर नहीं। इसलिए, यदि एनआई अधिनियम की धारा 148 में संशोधन को उद्देश्यपूर्ण तरीके से इस तरह

से व्याख्या की जाती है तो यह न केवल एनआई अधिनियम की धारा 148 में संशोधन के उद्देश्यों और कारणों को पूरा करेगा, बल्कि एनआई अधिनियम की धारा 138 को भी पूरा करेगा। अन्य बातों के साथ-साथ, चेक बाउंस होने के अपराध से संबंधित मामलों का शीघ्र निपटान। ताकि यह देखा जा सके कि अपील ोां को आसानी से दाखिल करने और कार्यवाही में स्थगन प्राप्त करने के कारण अनादरित चेक ोां के बेईमान दराजों द्वारा देरी की रणनीति के कारण, एक अनादरित चेक के भुगतानकर्ता के साथ अन्याय हुआ था, जिसे चेक के मूल्य को समझने के लिए अदालत की कार्यवाही में काफी समय और संसाधन खर्च करना पड़ता है और यह देखते हुए कि इस तरह के विलंब ने चेक लेनदेन की पवित्रता से समझौता किया है, संसद ने एनआई अधिनियम की धारा 148 में संशोधन करना उचित समझा है। इसलिए, इस तरह की उद्देश्यपूर्ण व्याख्या एनआई अधिनियम की धारा 148 और एनआई अधिनियम की धारा 138 में संशोधन के उद्देश्यों और कारणों को आगे बढ़ाने के लिए होगी।

10. अब जहां तक अपीलकर्ताओं की ओर से सीआरपीसी की धारा 357 (2) पर भरोसा करते हुए कहा गया है कि एक बार दोषसिद्धि के आदेश के खिलाफ अपील को प्राथमिकता दी जाती है, तो जुर्माना अपील लंबित होने तक वसूली योग्य नहीं है और इसलिए जुर्माने का 25% जमा करने का आदेश पारित नहीं किया जाना चाहिए था और उपरोक्त के समर्थन में दिलीप एस के मामले में इस न्यायालय के फैसले पर भरोसा किया जाना चाहिए था। धनुकर (सुप्रा) का संबंध है, उपर्युक्त में कोई सार नहीं है। एनआई अधिनियम की संशोधित धारा 148 का प्रारंभिक शब्द यह है कि "दंड प्रक्रिया संहिता में निहित किसी भी चीज के बावजूद ....."। **इसलिए सीआरपीसी की धारा 357 (2) के प्रावधानों के बावजूद, प्रथम अपीलीय अदालत के समक्ष लंबित अपील, एनआई अधिनियम की धारा 138 के तहत दोषसिद्धि और सजा के आदेश को चुनौती देते हुए, अपीलीय अदालत को अपीलकर्ता को ऐसी लंबित अपील जमा करने का निर्देश देने की शक्ति प्रदान की जाती है जो ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए जुर्माने या मुआवजे का न्यूनतम 20% होगी।**

उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए और ऊपर बताए गए कारणों के लिए, उच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय और आदेश किसी भी हस्तक्षेप की मांग नहीं करता है।

(15) उपर्युक्त निर्णय के अवलोकन से पता चलता है कि यह विशेष रूप से देखा गया है कि संसद ने धारा 138 के अधिनियमन के उद्देश्य और उद्देश्य को निराश होने से बचाने के लिए धारा 148 में संशोधन करना उचित समझा था और इस प्रकार, अपीलीय न्यायालय को अपीलकर्ता/दोषी को ऐसी राशि जमा करने का निर्देश देने की शक्ति प्रदान की थी जो ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए जुर्माने / मुआवजे का न्यूनतम 20% होगा। यह देखा गया है कि 1881 के अधिनियम की धारा 148 में संशोधन ने अपीलकर्ता/दोषी के अपील के किसी भी निहित अधिकार को नहीं छीना है और इस प्रकार, इस आशय का तर्क कि इसे पूर्वव्यापी रूप से लागू नहीं किया जा सकता है, खारिज कर दिया गया था। यह माना गया था कि 1881 के

अधिनियम की धारा 148 में संशोधन उस मामले में भी अपील के संबंध में लागू होगा, जहां 1881 के अधिनियम 138 के तहत आपराधिक शिकायतें 2018 के संशोधन अधिनियम संख्या 20 से पहले यानी 01.09.2018 से पहले दायर की गई थीं। यह आगे माना गया कि "*मई*" शब्द जिसका उपयोग किया गया है, उसे आम तौर पर "नियम" या "होगा" के रूप में माना जाना चाहिए। महत्वपूर्ण रूप से, यह देखा गया कि राशि जुर्माना/मुआवजे के 20% से कम नहीं होनी चाहिए और इसका आदेश या तो शिकायतकर्ता द्वारा दायर आवेदन पर या सीआरपीसी की धारा 389 के तहत अपीलकर्ता/दोषी द्वारा सजा के निलंबन के लिए दायर आवेदन पर भी दिया जा सकता है। रिलायंस ने सीआरपीसी के प्रावधान पर रखे जाने की मांग की, विशेष रूप से, धारा 357 को गैर-बाध्यकारी खंड के कारण खारिज कर दिया गया था। मैसर्स गिन्नी गारमेंट्स (सुप्रा) के मामले में इस न्यायालय की समन्वय पीठ ने 1881 के अधिनियम की धारा 143-ए और 148 के प्रावधानों पर विचार करते हुए कहा है कि

"... इसके अलावा, इस न्यायालय को प्रतिवादी के विद्वान वकील के तर्क में भी दम मिलता है कि यद्यपि 'अपील का अधिकार' एक मौलिक अधिकार है, हालांकि, किसी भी व्यक्ति को यह दावा करने का ठोस या निहित अधिकार नहीं है कि वह किसी विशेष प्रावधान के अनुसार ही अपील दायर करेगा और मुकदमा चलाएगा। अपील का अधिकार, एक सांविधिक अधिकार होने के नाते, उक्त प्रावधान द्वारा प्रदान किए गए मापदंडों के भीतर ही प्राप्त किया जाना है। इसलिए, यदि अपीलीय न्यायालय द्वारा अपील से निपटने से संबंधित किसी प्रावधान में परिवर्तन किया जाता है, तो उक्त प्रावधान को केवल प्रक्रियात्मक प्रावधान के रूप में माना जाना चाहिए। अधिनियम की धारा 148 के प्रावधान पर विचार करते हुए, यह न्यायालय याचिकाकर्ताओं के विद्वान वकील के तर्क में सार पाता है कि उक्त प्रावधान, किसी भी तरह से, अभियुक्त के स्वयं का बचाव करने या उसकी अपील पर मुकदमा चलाने के मौलिक अधिकार को प्रभावित नहीं करता है। प्रावधान स्पष्ट रूप से प्रावधान करता है कि यदि अभियुक्त/अपीलकर्ता को अपीलीय न्यायालय द्वारा बरी कर दिया जाता है; तो अंतरिम मुआवजे के रूप में अपीलीय न्यायालय द्वारा दी गई राशि उसे वापस कर दी जाएगी; शिकायतकर्ता द्वारा, ब्याज के साथ। अभियुक्त/आवेदक को बचाव या उसके द्वारा अपील के अभियोजन के लिए कोई अन्य अयोग्यता नहीं दी जानी चाहिए। हालांकि, अभी भी विचार किया जाने वाला आवश्यक प्रश्न यह है कि क्या अपीलीय न्यायालय को अपीलकर्ता को ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए जुर्माने या मुआवजे का न्यूनतम 20% जमा करने का आदेश देने के लिए अधिकृत करने का प्रावधान है; यह एक प्रक्रियात्मक कदम या अपीलकर्ता के मूल अधिकार को प्रभावित करने वाला प्रावधान है। इस संबंध में, यह ध्यान देने योग्य है कि जब मामला अपीलीय न्यायालय के समक्ष पहुंचता है, तो अपीलकर्ता / अभियुक्त पहले से ही 'दोषी' का दर्जा प्राप्त कर चुका है, जिसे पहले ही उसके आचरण का दोषी पाया गया है और ट्रायल कोर्ट द्वारा सजा सुनाई गई है। यदि ट्रायल कोर्ट जुर्माना लगाता है तो उसे उस राशि का भुगतान करने के लिए मजबूर करना उसके मूल अधिकार को प्रभावित नहीं करता है। बल्कि यह केवल प्रक्रिया

का मामला है। किसी अभियुक्त की दोषसिद्धि के मामले में, ट्रायल कोर्ट दोषी/अपीलकर्ता पर कोई जुर्माना नहीं लगा सकता है। ऐसी स्थिति में, अपीलीय न्यायालय अपीलकर्ता को कोई राशि जमा करने का आदेश नहीं दे पाएगा; क्योंकि प्रावधान के तहत, अपीलीय न्यायालय ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए 'जुर्माना' या 'मुआवजे' का 20% जमा करने का आदेश देने के लिए अधिकृत है। यदि जुर्माना या मुआवजे का कोई आदेश नहीं है तो अपीलीय स्तर पर किसी भी राशि को जमा करने का कोई आदेश नहीं हो सकता है। यदि ट्रायल कोर्ट जुर्माना लगाता है, जो चेक की राशि का दोगुना तक हो सकता है और जिसे शिकायतकर्ता को भुगतान किए जाने वाले मुआवजे के रूप में माना जा सकता है, तो उस स्थिति में, आरोपी / अपीलकर्ता का दायित्व ट्रायल कोर्ट द्वारा पहले ही निर्धारित किया जा चुका है। **शिकायतकर्ता को राशि का भुगतान करने का दायित्व उस समय पहले से ही मौजूद है जब अपीलकर्ता अपीलीय न्यायालय के समक्ष आता है।** यह अपीलीय न्यायालय का विशेषधिकार है कि जुर्माना या मुआवजा लगाने के आदेश को निलंबित किया जाए या नहीं। यदि अपीलीय न्यायालय द्वारा जुर्माने पर रोक नहीं लगाई जाती है तो जुर्माने या मुआवजे की पूरी राशि, अन्यथा, सीआरपीसी की धारा 421 के तहत निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार आरोपी / अपीलकर्ता से वसूली योग्य हो जाती है। इसलिए, यदि निचली अपीलीय अदालत ने 20% राशि जमा करने का आदेश पारित किया है, तो हालांकि अधिनियम की धारा 148 विशेष रूप से उस राशि का उल्लेख नहीं करती है जिसे अपीलीय न्यायालय द्वारा जमा करने का आदेश दिया गया है। सीआरपीसी की धारा 421 के तहत वसूली योग्य हो, अन्यथा, जुर्माने का हिस्सा होना; यह केवल सीआरपीसी की धारा 421 के तहत वसूल किया जा सकता है**। इसलिए, यदि अपीलीय न्यायालय जुर्माने या मुआवजे की 20% या उससे अधिक राशि जमा करने का आदेश पारित करता है, तो वास्तव में, आरोपी / अपीलकर्ता के लिए एक लाभकारी आदेश है; क्योंकि इसका मतलब यह होगा कि अपीलीय न्यायालय के आदेश के अनुसार ट्रायल कोर्ट द्वारा लगाए गए जुर्माने या मुआवजे की राशि, 20% से अधिक, अपील के लंबित रहने के दौरान वास्तव में रोक दी जा रही है। इसलिए अपीलकर्ता के किसी भी महत्वपूर्ण अधिकार को पूर्वनिर्धारित करने के बजाय यह प्रावधान अभियुक्त के पक्ष में लाभकारी प्रावधान है**। फिर भी ऐसी स्थिति हो सकती है जहां एक ट्रायल कोर्ट कारावास की किसी भी सजा के बिना, चेक की राशि से दोगुना तक केवल जुर्माना या मुआवजे की सजा पारित करता है। उस स्थिति में, जुर्माना तुरंत वसूली योग्य हो जाता है। हालांकि, सीआरपीसी की धारा 424 में प्रावधान है कि यह राशि ट्रायल कोर्ट के आदेश की तारीख से 30 दिनों के भीतर या ट्रायल कोर्ट के आदेश से 30 दिनों के भीतर शुरू होने वाली तीन किस्तों में पूरी तरह से देय होगी, और शेष दो किस्तों का भुगतान 30 दिनों के अंतराल पर किया जाएगा। इसलिए जुर्माना या मुआवजे की पूरी राशि का भुगतान 90 दिनों के भीतर पूरा करना होगा। सीआरपीसी की धारा 424 के प्रावधान को नीचे प्रस्तुत किया गया है: -

424. कारावास की सजा के निष्पादन का निलंबन। (1) जब किसी अपराधी को केवल जुर्माने की सजा सुनाई गई है और जुर्माना अदा न करने पर कारावास की सजा सुनाई गई है, और जुर्माना तुरंत अदा नहीं किया गया है, तो न्यायालय-

(अ) आदेश यह है कि जुर्माना आदेश की तारीख से तीस दिनों से अधिक नहीं होने वाली तारीख पर या उससे पहले या दो या तीन किस्तों में देय होगा, जिसमें से पहला आदेश की तारीख से तीस दिनों से अधिक नहीं और दूसरा या अन्य एक अंतराल पर या अंतराल पर देय होगा, जैसा भी मामला हो, तीस दिनों से अधिक नहीं; •

(आ) कारावास की सजा के निष्पादन को निलंबित करना और अपराधी को बांड के अपराधी द्वारा निष्पादन पर, जमानत के साथ या बिना, जैसा कि अदालत उचित समझे, उस तारीख या तारीख को अदालत के समक्ष पेश होने के लिए शर्त, जिस तारीख या तारीख को या उससे पहले जुर्माना या उसकी किस्तों, जैसा भी मामला हो, रिहा करना, जैसा भी मामला हो, रिहा करना, बनाया जाना है; और यदि जुर्माने या किसी किस्त की राशि, जैसा भी मामला हो, आदेश के तहत देय नवीनतम तारीख को या उससे पहले वसूल नहीं की जाती है, तो अदालत कारावास की सजा को तुरंत निष्पादन में ले जाने का निर्देश दे सकती है। (2) उपधारा (1) के उपबंध ऐसे किसी भी मामले में भी लागू होंगे जिसमें धन के भुगतान का आदेश वसूल न होने पर दिया गया हो जिसकी वसूली न होने पर कारावास दिया जा सकता है और धन का भुगतान तुरंत नहीं किया जाता है; और, यदि वह व्यक्ति जिसके खिलाफ आदेश दिया गया है, उस उपधारा में संदर्भित बांड में प्रवेश करने की आवश्यकता होने पर, ऐसा करने में विफल रहता है, तो अदालत तुरंत कारावास की सजा पारित कर सकती है। उपर्युक्त प्रावधान न्यायालय को 'डिफ़ॉल्ट कारावास' की सजा के निष्पादन को निलंबित करने के लिए अधिकृत करता है, यदि दोषी अदालत द्वारा आदेशित तारीखों पर राशि के भुगतान के लिए बांड जमा करता है। हालांकि, यह धारा जुर्माने या मुआवजे की राशि का भुगतान न करने के परिणामों का भी प्रावधान करती है, जो अभियुक्त/दोषी के बॉन्ड को रद्द कर सकती है और उसे हिरासत में भेज सकती है, जो सजा के निलंबन के आदेश को वापस लेने से हो सकती है, जिससे अपीलकर्ताओं/दोषी को जेल में डाल दिया जा सकता है। इस बिंदु से भी अधिनियम की धारा 148 का प्रावधान अभियुक्त / दोषी / अपीलकर्ता के लिए इस अर्थ में बहुत फायदेमंद है कि यह अपीलीय अदालत को दोषी को जुर्माना या मुआवजे का केवल 20% जमा करने का आदेश देने की अनुमति देता है, शेष राशि को 90 दिनों की अवधि से परे भुगतान करने के लिए छोड़ देता है; या अपील के समापन तक भी भुगतान नहीं किया जाना चाहिए। उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, यह बिल्कुल स्पष्ट है कि लंबित अपील के दोषी-अपीलकर्ता से जुर्माना या मुआवजे की वसूली की प्रक्रिया सीआर में पहले से मौजूद थी। पी.सी. अधिनियम की धारा 148 में निहित प्रावधान के आगमन से पहले, इसलिए, इस संशोधित प्रावधान के माध्यम से अपीलकर्ता से जुर्माना या मुआवजे की जबरन वसूली का कोई नया पहलू नहीं बनाया जा रहा है। इसके विपरीत, यह प्रावधान दोषी/अपीलकर्ता को अधिक सांस लेने की जगह प्रदान करता है;

सीआरपीसी की धारा 421 और 424 के तहत यथा विचार की गई वसूली की अन्य प्रक्रियाओं की तुलना में, जो समय सीमा और परिणामों के संदर्भ में अधिक कठिन है। चूंकि अपीलकर्ता/दोषी से जुर्माना या मुआवजे की वसूली के प्रावधान वसूली से संबंधित मौजूदा प्रक्रिया में पहले से मौजूद थे, इसलिए अधिनियम की धारा 148 के तहत पेश किया गया प्रावधान; जो केवल आंशिक रूप से राशि की वसूली से संबंधित है, अंतरिम उपाय के रूप में, केवल विशुद्ध रूप से प्रक्रियात्मक माना जाना चाहिए, जो अन्यथा पहले से मौजूद प्रावधानों की तुलना में अपीलकर्ता के लिए भी फायदेमंद है। इसलिए यह माना जाना चाहिए कि अधिनियम की धारा 148 का प्रावधान इस प्रावधान के लागू होने की तारीख में लंबित या उसके बाद दायर की गई सभी अपीलों को नियंत्रित करेगा।

(सोलह) उक्त निर्णय के अवलोकन से पता चलता है कि यह देखा गया है कि यद्यपि 'अपील का अधिकार' एक मौलिक अधिकार है, तथापि, किसी भी व्यक्ति को यह दावा करने का ठोस या निहित अधिकार नहीं है कि वह केवल किसी विशेष प्रावधान के अनुसार अपील दायर करेगा और मुकदमा चलाएगा। अपील का अधिकार, एक सांविधिक अधिकार होने के नाते, केवल उक्त प्रावधान द्वारा प्रदान किए गए मापदंडों के भीतर ही प्राप्त किया जाना है और इस प्रकार, यदि अपीलीय न्यायालय में अपील से निपटने से संबंधित किसी भी प्रावधान में परिवर्तन किया जाता है, तो उक्त प्रावधान को केवल प्रक्रियात्मक प्रावधान के रूप में माना जाना चाहिए। यह माना गया कि 1881 के अधिनियम की धारा 148, किसी भी तरह से अभियुक्त के स्वयं का बचाव करने या अपील पर मुकदमा चलाने के मौलिक अधिकार को प्रभावित नहीं करती है।

(सत्रह) उपरोक्त पृष्ठभूमि में, यह न्यायालय याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए तर्कों से निपटेगा।

(अठ्ठारह) याचिकाकर्ता के वकील का पहला तर्क यह है कि क्रमशः 17.03.2021 और 22.07.2021 के आक्षेपित आदेश वास्तव में 07.11.2017 के आदेश की समीक्षा के समान होंगे, जो दो आधारों पर गलत है क्योंकि 1881 के अधिनियम की धारा 148 के प्रावधान के अवलोकन से पता चलता है कि अपीलीय न्यायालय द्वारा उक्त शक्ति का उपयोग कब किया जा सकता है। इसके अलावा, ***सुरिंदर सिंह दैसवाल*** (*सुप्रा*) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने विशेष रूप से फैसले के पैरा 9 में कहा है कि ऐसा या तो मूल शिकायतकर्ता द्वारा दायर आवेदन पर या सीआरपीसी की धारा 389 के तहत अपीलकर्ता/दोषी द्वारा सजा के निलंबन के लिए दायर आवेदन पर भी किया जा सकता है। इस प्रावधान का उद्देश्य बहुत स्पष्ट है। एक बार 1881 के अधिनियम की धारा 138 के तहत किसी मामले में, आरोपी व्यक्तियों को दोषी ठहराया गया है, फिर, 1881 के अधिनियम के उद्देश्यों को ध्यान में रखते हुए, यह अनिवार्य किया गया है कि अपीलीय न्यायालय को अपील दायर करने वाले आरोपी व्यक्तियों को जुर्माने / मुआवजे का न्यूनतम 20% भुगतान करने का निर्देश देना चाहिए और वास्तव में, यह देखा गया है कि "हो सकता है" शब्द को "होगा" के रूप में पढ़ा जाना चाहिए

और इस प्रकार, नियम के मामले के रूप में, अपीलीय न्यायालय को अपीलकर्ता को मुआवजे / जुर्माने की न्यूनतम 20% राशि जमा करने का निर्देश देना आवश्यक है। लागू आदेशों के आधार पर, अपीलीय न्यायालय ने कानून के उक्त प्रावधान को लागू करने की मांग की है और ***सुरिंदर सिंह देसवाल*** (*सुप्रा*) के मामले में माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून का भी पालन किया है। इसके अलावा, धारा 148 एक गैर-बाध्यकारी खंड से शुरू होती है, जो यह निर्धारित करती है कि "दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 में निहित किसी भी चीज के बावजूद", इस आशय का कोई भी तर्क कि यह समीक्षा के बराबर होगा और सीआरपीसी के तहत अनुमेय नहीं होगा, गैर-बाध्यकारी खंड के मद्देनजर कोई प्रभाव नहीं होगा। इसके अलावा, बाद के चरण में जमा राशि की मांग करना सजा के निलंबन के आदेश की "समीक्षा" के अर्थ के भीतर नहीं आएगा।

(उन्नीस) याचिकाकर्ता के वकील की दूसरी दलील के संबंध में कि वास्तव में, न्यायिक मजिस्ट्रेट प्रथम श्रेणी, हिसार ने याचिकाकर्ता को सजा सुनाते हुए कहा था कि अपील/संशोधन के निर्णय के बाद आदेश को अंतिम रूप दिए जाने की स्थिति में शिकायतकर्ता को मुआवजे की राशि देय होगी, यह कहने के लिए पर्याप्त है कि लागू आदेशों के अनुसार, 20% की जो जमा करने का निर्देश दिया गया है, उसे शिकायतकर्ता को भुगतान करने का आदेश नहीं दिया गया है। इस प्रकार, उक्त तर्क को खारिज कर दिया जाता है।

(बीस) याचिकाकर्ता के वकील का तीसरा तर्क इस आशय का है कि उक्त बिंदुओं को जवाब में उठाया गया था, लेकिन हालांकि, 17.03.2021 (अनुबंध पी-6) के आक्षेपित आदेश में इस पर विचार नहीं किया गया है और इस प्रकार, आक्षेपित आदेश गैर-स्पष्ट है, इसे भी खारिज किया जाना चाहिए। आक्षेपित आदेश के अवलोकन से पता चलता है कि 1881 के अधिनियम की धारा 148 के संशोधित प्रावधानों के साथ-साथ माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा सुरेंद्र सिंह देसवाल (सुप्रा) में निर्धारित कानून और *मेसर्स गिन्नी गारमेंट्स (सुप्रा) में इस न्यायालय की समन्वय पीठ द्वारा निर्धारित* कानून का एक विशिष्ट संदर्भ दिया गया है और इस प्रकार, आक्षेपित आदेश को गैर-बोलने वाला नहीं कहा जा सकता है। वास्तव में, सुरिंदर सिंह देसवाल (सुप्रा) के मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय के निर्णय के पैरा 9 के अवलोकन से पता चलता है कि यदि उक्त राशि अभियुक्त/अपीलकर्ता से जमा करने का निर्देश नहीं दिया जाता है तो विशेष कारण दिए जाने चाहिए। याचिकाकर्ता के वकील ने बहुत ही निष्पक्ष रूप से कहा है कि उत्तर के पैरा 1 में ली गई पहली आपत्ति कि संशोधन वर्ष 2017 में दायर अपील पर लागू नहीं होगा, पूरी तरह से एकीकृत है और सुरिंदर सिंह देसवाल (सुप्रा) में माननीय सर्वोच्च न्यायालय के फैसले द्वारा कवर किया गया है। याचिकाकर्ता के खिलाफ। आदेश को अंतिम रूप दिए जाने की स्थिति में ही शिकायतकर्ता को देय मुआवजे की राशि के संबंध में उत्तर में दूसरी आपत्ति को इस आदेश के पूर्व भाग में पहले ही खारिज कर दिया गया है। जमा के लिए आवेदन के बारे में तीसरी आपत्ति केवल याचिकाकर्ता पर समझौता करने के लिए दबाव डालने के लिए दायर की गई है, जो निराधार है और इस प्रकार, खारिज कर दी जाती है। इस प्रकार,

उत्तर में उठाई गई सभी आपत्तियां गुण-दोष से रहित हैं और खारिज किए जाने के लायक हैं। यह आदेश धारा 148 के संशोधित प्रावधानों के साथ-साथ माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्धारित कानून को ध्यान में रखते हुए पारित किया गया है और इस प्रकार, कानूनी और वैध है और इसे बरकरार रखा जाना चाहिए।

(इक्कीस) याचिकाकर्ता के विद्वान वकील द्वारा उठाए गए चौथे तर्क के संबंध में कि दोनों अभियुक्तों को मुआवजे की राशि का 20% जमा करने के लिए अलग-अलग नहीं कहा जा सकता था और उक्त उद्देश्य के लिए, 1881 के अधिनियम की धारा 148 पर भरोसा करने की मांग की गई है, जहां "ड्रॉअर" शब्द का उल्लेख किया गया है और इस की समन्वय पीठ द्वारा पारित अंतरिम आदेश पर भी। न्यायालय। शिकायतकर्ता के मामले के अनुसार और आक्षेपित निर्णय के अनुसार, वर्तमान याचिकाकर्ता और सीमा गुप्ता (अन्य मामले में याचिकाकर्ता) ने चेक पर हस्ताक्षर किए हैं और इस प्रकार, दोनों दराज के अर्थ के भीतर आएंगे और इसलिए, 1881 के अधिनियम की धारा 148 का प्रावधान स्वतंत्र रूप से उनमें से प्रत्येक पर लागू होगा। 1881 के अधिनियम की धारा 148 के तहत उक्त प्रावधान याचिकाकर्ता के साथ-साथ सह-अभियुक्त सीमा गुप्ता पर भी लागू होगा क्योंकि अपीलीय न्यायालय को उक्त शक्ति दराजक/अभियुक्त/अपीलकर्ता को जुर्माना/मुआवजे का न्यूनतम 20% जमा करने का निर्देश देने के लिए दी गई है, जिन्होंने अपील दायर करने का विकल्प चुना है और वर्तमान मामले में दोनों अभियुक्तों को दोषी ठहराया गया है और उन्होंने अपने संबंधित को प्राथमिकता दी है। अपील करते हैं और इस प्रकार, गुण-दोष के आधार पर अपने मामलों को उत्तेजित करना चाहते हैं। इस प्रकार, दोनों अपीलों में उन्हें न्यूनतम 20% जमा करने की आवश्यकता वाले आदेश, अपीलीय न्यायालय की शक्ति के भीतर होंगे।

(बाईस) प्रावधान अपीलीय अदालत की शक्ति को आरोपी व्यक्ति से जमा की उक्त न्यूनतम राशि मांगने से प्रतिबंधित नहीं करते हैं, यदि किसी अन्य आरोपी व्यक्ति को उक्त राशि जमा करने के लिए कहा गया है। यदि उक्त पहलू पर याचिकाकर्ता के विद्वान वकील के तर्क को स्वीकार किया जाता है, तो इससे अराजक स्थिति पैदा हो जाएगी, क्योंकि इस बात को लेकर पूरी तरह से भ्रम होगा कि किस अपीलकर्ता को राशि जमा करने का निर्देश दिया जाना है और किस अपीलकर्ता को भुगतान करने से छूट दी जानी है। इससे ऐसी स्थिति पैदा हो सकती है जहां एक आरोपी दूसरे आरोपी के अपील दायर करने का इंतजार करेगा ताकि पहली अपील दायर करने वाले आरोपी/अपीलकर्ता को राशि जमा करने के लिए कहा जाए और बाद में अपील दायर करने वाला आरोपी छूट की मांग कर सके। ऐसी स्थिति में, आरोपी व्यक्ति जो अपील दायर करने के अपने अधिकार का पीछा कर रहा है, वह अन्य आरोपी को जमा करने से बचाते हुए जमा राशि का बोझ डाल सकता है। उक्त स्थिति की परिकल्पना 1881 के अधिनियम के तहत कभी नहीं की गई थी। इसके अलावा, एक बार, अधिनियम में दूसरे अपीलकर्ता से जमा राशि मांगने पर कोई प्रतिबंध नहीं है और अपीलीय न्यायालय ने आरोपी / अपीलकर्ता दोनों पर उक्त शर्त लगाने का विकल्प चुना है, तो यह न्यायालय यह नहीं पाता है कि आक्षेपित आदेश

किसी भी अनियमितता या अवैधता से ग्रस्त हैं। वास्तव में, यदि दोनों अभियुक्त व्यक्तियों/अपीलकर्ताओं द्वारा जमा की जाने वाली कुल राशि को भी ध्यान में रखा जाए तो यह राशि 60,00,000/- रुपए होगी जो अभी भी ट्रायल कोर्ट द्वारा दी गई मुआवजे की कुल राशि अर्थात 1,50,00,000/- रुपए से कम है। वास्तव में, 1881 के अधिनियम की धारा 148 के अवलोकन से पता चलता है कि अपीलीय न्यायालय के पास एकल अभियुक्त व्यक्ति/अपीलकर्ता को ट्रायल कोर्ट द्वारा दिए गए जुर्माने/मुआवजे के 20% से अधिक का भुगतान करने का निर्देश देने की शक्ति है और इस प्रकार, 60,00,000/- रुपये की उक्त राशि अकेले एक अभियुक्त / अपीलकर्ता से भी जमा करने की मांग की जा सकती थी। समन्वय पीठ द्वारा पारित अंतरिम आदेश पर भरोसा करना बाध्यकारी मिसाल नहीं माना जा सकता क्योंकि यह न्यायालय उपर्युक्त पहलू पर अंतिम विचार कर रहा है और जिन तथ्यों और परिस्थितियों में उक्त अंतरिम आदेश पारित किया गया था और साथ ही उक्त मामले में आक्षेपित आदेश भी इस न्यायालय के समक्ष नहीं है।

(तेईस) इसके अलावा, वर्तमान मामले में, याचिकाकर्ता को 17.03.2021 के आदेश के माध्यम से 20.05.2021 तक मुआवजे के 20% की राशि जमा करने का निर्देश दिया गया था और 22.07.2021 के आदेश के अनुसार, याचिकाकर्ता ने 17.03.2021 के आदेश के अनुपालन में 1,00,000 रुपये की राशि का भुगतान किया था और सुनवाई की अगली तारीख पर शेष राशि का भुगतान करने का वचन दिया था। उक्त वचन में से, अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने जमा के लिए समय 24.09.2021 तक बढ़ा दिया था। इस प्रकार, याचिकाकर्ता चंद्र प्रकाश गुप्ता को भी आक्षेपित आदेशों को चुनौती देने से रोका जाता है।

(चौबीस) इस प्रकार, उपर्युक्त तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए, वर्तमान याचिका खारिज की जाती है।

जेएस मेहंदीरत्ता

अस्वीकरण - स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देशय के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है | सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा

प्रभात किरण प्रसाद,
(अनुवादक)